**ओ३म्**

**‘ऋषि दयानन्द ने अपने माता-पिता, परिवार व गृह का त्याग क्यों किया?’**

 **-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

ऋषि दयानन्द महाभारत काल के बाद और अपने समय के वेदों के सर्वोच्च विद्वान, महर्षि, ऋषि, मुनि, आप्त पुरुष व महात्मा थे। इसका प्रमाण उनके लिखे सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका आदि ग्रन्थ और ऋग्वेद-यजुर्वेद का संस्कृत-हिन्दी में रचा भाष्य है। विश्व के अपने प्रकार के एकमात्र आर्यसमाज नामी संगठन की स्थापना भी ऋषि दयानन्द ने ही की थी जिसके अनेक उद्देश्यों में मुख्य उद्देश्य था **‘वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।’** वेदों को सब सत्य विद्याओं की पुस्तक सिद्ध करने के लिए ही उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका और वेद भाष्य की रचना की। वेदों को ईश्वरीय ज्ञान, सब सत्य विद्याओं का पुस्तक, वेदों का ज्ञान सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर के द्वारा 4 ऋषियों को मिलना, वेदों में मूर्तिपूजा, मृतक श्राद्ध, फलित ज्योतिष, जन्मना जातिव्यवस्था, असमानता, ऊंच-नीच, मनुष्यों के बीच किसी भी प्रकार के भेदभाव का विधान नहीं है, इन मान्यताआं व सिद्धान्तों को उन्होंने अपने ग्रन्थों में सिद्ध किया है। ऋषि दयानन्द एक प्रसिद्ध योगी भी थे। ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना की विधि की पुस्तक **‘सन्ध्या’** लिखकर, उपासना से होने वाले लाभों का वर्णन कर तथा योग के नाम पर प्रचलित मिथ्या मान्यताओं का खण्डन कर उन्होंने योग का सत्य स्वरुप भी समाज व देश के मनुष्यों को बताया है। ऋषि दयानन्द के विषय में यह तथ्य भी महत्वपूर्ण है कि वेदों का प्रचार व प्रसार करने की प्रेरणा उन्हें मथुरा के अपने गुरु प्रज्ञाचक्षु दण्डी स्वामी विरजानन्द सरस्वती से मिली थी जो देश भर में अविद्या के प्रचार व प्रसार से चिंतित थे और नेत्रान्ध होने के कारण आर्ष ज्ञान के दैवीय स्रोत वेदों का प्रचार प्रसार करने में समर्थ नहीं थे।

 इस स्थिति में पहुंचने में ऋषि दयानन्द का युवावस्था में गृह त्याग का निर्णय सर्वाधिक महत्व रखता है। गृह त्याग का अर्थ है कि माता-पिता, सभी कुटुम्बियों, इष्ट-मित्रों व सुख-सुविधाओं से पूर्णतः वंचित होना व दर-दर की ठोकरे खाना। ऐसा निर्णय लेना किसी के लिए भी सम्भव नहीं होता परन्तु इतिहास में ऐसे कुछ अपवाद मिल जाते हैं। ऋषि दयानन्द के जीवन में जब हम इसका कारण ढूंढते हैं तो हमें उनके जीवन की दो घटनायें इसका कारण प्रतीत होती हैं। पहली घटना शिवरात्रि के दिन पिता की प्रेरणा से उपवास रखने और रात्रि में पिता के साथ समीप के शिवालय में जाकर वहां जागरण करने की है। रात्रि में जब लगभग 12 बजे शिव मूर्ति व शिवलिंग की पूजा करके सभी निद्रालीन होकर सो जाते हैं तो वहां शिव की पिण्डी पर मन्दिर के अन्दर के बिलों से निकले कुछ चूहों को वहां भक्तों द्वारा चढ़ायें गये अन्न व पदार्थों को खाते हुए देखते हैं। एक 13-14 वर्षीय बालक होने के कारण वह समझते हैं कि जब किसी के उपर कोई चूहा चढ़ जाये तो वह उसे अवश्य भगाता व दूर फेंकता हैं। शिव भगवान सर्वशक्तिमान हैं। वह चूहों को भगाते व दूर क्यों नहीं फेंकते? उनकी धृष्टता के लिए उन्हें दण्ड क्यों नहीं देते, इसे समझने में वह असमर्थ रहते हैं। इस विषय में वह वहां सो रहे अपने पिता श्री करसन जी तिवारी को उठाकर उनसे पूछते हैं परन्तु वह भी उनके प्रश्नों का समाधान नहीं कर पाते। इस घटना का उनके जीवन पर यह प्रभाव होता है कि मूर्ति पूजा की यथार्थ स्थिति, रहस्य वा सच्चाई उनके सामने आ जाती हैे और हमेशा के लिए वह मूर्तिपूजा से पृथक हो जाते हैं।

 ऋषि दयानन्द के जीवन में गृहत्याग में कारण बनी दो घटनायें तब होती हैं जब कुछ समय पश्चात उनकी एक बहन की हैजे से मृत्यु हो जाती है और उसके कुछ दिनों बार उन्हें सबसे अधिक प्यार देने वाले चाचा जी की मृत्यु हो जाती है। इन घटनाओं से वह मृत्यु रूपी अभिविनेश क्लेश से भयभीत व दुःखी हो जाते हैं और अन्दर ही अन्दर उन्हें तीव्र वैराग्य हो जाता है। वह अपने दिल की बात दिल में ही रखते हैं किसी को बताते नहीं परन्तु किसी प्रकार उनके माता-पिता तक बात पहुंच जाती है और वह उन्हें विवाह के बन्धन में बांधने का निर्णय करते हैं। बालक दयानन्द इसके लिए तैयार नहीं थे। उनका वैराग्य इतना पक्का था कि विवाह का कार्यक्रम निश्चित हो जाने व घर में विवाह की तैयारियां हो जाने पर वह विवाह से कुछ ही दिन पूर्व एक रात्रि को घर से निकल जाते हैं और उस समय के वहां कुछ मील दूरी पर स्थिति साधुओं व योगियों की शरण लेकर उनसे ईश्वर के सच्चे स्वरुप और योगियों से योग विद्या सीखने लगते हैं। घर से लगभग 21 वर्ष की अवस्था में वह निकले थे। संस्कृत व गुजराती भाषाओं का उन्हें ज्ञान था। अतः जहां भी इन भाषाओं का कोई धर्मग्रन्थ उन्हें मिलता था, वह उसे लेकर उसका अध्ययन करते थे। ऐसा करते हुए उनका धार्मिक पुस्तकों का ज्ञान भी बढ़ता रहा। आगे चलकर वह योग विद्या में प्रवीण हो जाते हैं। अब उन्हें एक ऐसे गुरु की तलाश होती है जो उनकी अविद्या को पूर्णतया दूर कर उन्हें आर्ष ज्ञान कराकर निभ्र्रान्त ज्ञान दे सके। उनकी यह अभिलाभा मथुरा के दण्डी स्वामी गुरु विरजानन्द सरस्वती की पाठशाला में ढ़ाई वा तीन वर्ष अध्ययन कर पूरी होती है। अब उनके गृह त्याग के सभी लक्ष्य पूरे हो जाते हैं। गुरु दक्षिणा का अवसर आता है। इस अवसर पर प्रज्ञाचक्षु गुरु अपने शिष्य स्वामी दयानन्द को अपने हृदय की वेदना सुनाते हुए कहते हैं कि सारा संसार अविद्या से ग्रस्त हो गया है। सर्वत्र अनार्ष ज्ञान का प्रचार होने से सभी लोग दुःखी व सन्तप्त हैं। उनके कल्याण के लिए आर्ष ज्ञान के प्रतिनिधि ईश्वरीय ज्ञान वेदों व ऋषियों के सत्य विद्याओं के ग्रन्थों का प्रचार व प्रसार होना आवश्यक है। स्वामी विरजानन्द जी स्वामी दयानन्द जी को कहते है कि उन्हें गुरु दक्षिणा में किसी भौतिक द्रव्य व बहुमूल्य पदार्थों की इच्छा नहीं है। यदि वह वेदों का प्रचार करते हुए अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि कर सकते हों तो वही उनकी उनसे अपेक्षा व आकांक्षा है, सर्वोत्तम गुरु दक्षिणा होगी। ऋषि दयानन्द गुरु जी से विदा के इस अवसर पर गुरु जी के प्रति गहरी श्रद्धा के भावों सहित बहुत ही विनीत व विदाई के दुःख से भरे हुए थे। उन्होंने गुरु जी के सभी शब्दों को सुना और विचार कर गुरु जी को उनके स्वप्न को साकार करने के लिए अपने तन-मन अर्थात् मनसा-वाचा-कर्मणा समर्पित भाव से वेद व वैदिक साहित्य का प्रचार कर अविद्या को दूर करने का वचन दिया। दयानन्द जी का उत्तर सुनकर गुरु जी का दृदय गदगद हो गया। अमुमान है कि उनकी आंखे सजल होकर अश्रु प्रवाह होने लगा। आज उन्हें अपने एक योग्यतम शिष्य से वह वस्तु प्राप्त हुई थी जो विश्व का कोई भी व्यक्ति उन्हें दे नहीं सकता था। गुरु जी ने स्वामी दयानन्द के सौभाग्य और कल्याण की बधाई देने के साथ उन्हें विदा किया।

 स्वामी दयानन्द जी ने गुरु को इस अवसर पर जो वचन दिया उसे अपने भावी जीवन में प्राणपण से पूरा किया। इसके लिए उन्होंने अपनी समाधि का सुख भी कम कर दिया व उससे अधिक महत्व गुरु आज्ञा के पालन को दिया। उनका जीवन चरित और उनकी आप बीती घटनायें पढ़कर हृदय द्रवित हो जाता है। पाठकों की अश्रु धारायें रूकती नहीं हैं। मन को उनके त्याग व बलिदान की घटनायें पढ़कर उनकी मान्यताओं व सिद्धान्तों की पुष्टि होने की साक्षी पाठक की आत्मा उसे देती है। हमारी व प्रायः सभी आर्यसमाज के विद्वानों की ऐसी ही स्थिति है। मन तो सभी का करता है कि वह स्वामी दयानन्द जी जैसे बने। अनेकों ने प्रयास भी किये और ज्ञान व सामाजिक कार्यों की बहुत ऊंची स्थिति को प्राप्त किया। ऋषि दयानन्द का जीवन एक श्रेष्ठतम व आदर्श जीवन था और विश्व के 7-8 अरब लोगों के लिए उनसे अच्छा कोई आदर्श हो सकता है, हमें नहीं लगता।

 ऋषि दयानन्द जी के गृह त्याग के पीछे मुख्य कारण सच्चे शिव व ईश्वर का ज्ञान प्राप्त कर उसका साक्षात्कार करना व अपनी सहोदरा बहिन व चाचा जी की मृत्यु से उत्पन्न वैराग्य था। इन बातों ने ऋषि को विश्व का ऐसा सर्वोच्च महापुरुष बना दिया जो **‘‘भूतो न भविष्यति”** उपमा को उन पर सत्य चरितार्थ करने वाला था। हम उनकी स्मृति को नमन कर इन पंक्तियों को विराम देते हैं। लेखक के श्रम का प्रतिदान उसके कार्य की सम्यक आलोचनायें होती है। इससे उसे वंचित न रखें। इति शम्।

  **-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**